क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल

(National Council of Educational Research and Training, New Delhi)

विद्यया ऽ मृतमश्नुते

एन सी ई आर टी
NCERT

PAC-23.10

Programme Report
Year 2023-24

DEVELOPMENT FOR ARTS AND CRAFTS
IN RIE, BHOPAL

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल में कलाओं एवं हस्तकलाओं के स्त्रोत केन्द्र का विकास

कार्यक्रम समन्वयक :

डॉ. सुरेश मकवाना
सहायक प्राध्यापक (गुजराती)
भाषा एवं सा.शि.विभाग (DESSH)
क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान श्यामला हिल्स, भोपाल 461002

प्राचार्य संदेश

आदिम संगीत और संगीत वाद्य अब इतने परिकृत और विशिष्टीकृत हो चुके हैं कि जीवन के सामान्य कार्यकलापों में उनकी जड़ें खोजने के बजाय हम प्राय: बिना प्रमाण के उन्हें ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेते हैं। लेकिन अगर सामाजिक विकास के गहरे संबंधों और वाद्यों से संगीत के नजदीक रिश्तों को समझना है तो इस पर हमें कुछ अधिक चिंतन करना होगा और इस क्षेत्र में जॉच शुरू करते ही हम पाते है कि संगीत और संगीत वाद्य दोनों का आरंभ मानव की गैर-संगीतात्मक गतिविधियों में छिपा पड़ा है। भारतीय संस्कृति की एक खासियत है कि लगातार तेजी से हो रहे परिवर्तनों के बावजूद मानव सभ्यता का जीवन, कला संस्कृति एवं सास्ंकृतिक, सामाजिक, धार्मिक, भाषायी भिन्नताओं का बचे रहना। मानव विज्ञानियों ने आदिवासियों के संस्कृति विकास का अवशोषण उपनिवेशवाद का सामना करना पड़ रहा है। जिसमें विभिन्न स्तरों पर विभाजित किया है। जिसमें कला जनजातियों की विविधताओं और लोक वाद्यों के बारे में व्यापक जानकारी मिलती है। लेकिन वर्तमान में इन कलाओं का अवशोषण, उवनिवेशावाद का सामना करना पड़ रहा है। जिसमें भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक अस्तित्व के सामने प्रश्नार्थ खड़ा किया है। भाषाई लोक साहित्य, सांस्कृतिक धरोहर एवं जनजातियों द्वारा लोकवाद्य यंत्रों के माध्यम से जीवन यापन करने वाले समुदाय के जीवनमूल्यों का ह्रास हो रहा है। वैश्विक पूँजीवादी एवं आधुनिक जीवन शैली में हमारी कला लोकवाद्य बहुत जल्दी विछिन्न हो रहा है। इस परिवेश में उन्हें संजोया जाए यह अति आवश्यक है। जनजातियों के

शैक्षिक विकास हेतु अनेक योजनाएं चलाई जा रही हैं। किन्तु उसका प्रतिफल उचित रूप से नहीं मिल रहा है। एन.सी.ई.आर.टी. भारत के प्राथमिक क्षेत्र में प्रभावशाली भूमिका निभा रही है। प्रारंभिक स्तर से उच्च माध्यमिक स्तर तक के पाठयक्रम, संरचना पाठयपुस्तकें संदर्भ साहित्य एवं प्रशिक्षण, विकास अनुसंधान एवं विस्तार हेतु सतत् कर्मशील है जिसमें लोकवाद्यों और उनकी परम्परा को सौन्दर्यबोध से सहजना अतिआवश्यक है। क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल की निरंतर प्रत्यनशीन है कि हमारी पश्चिमी सभ्यता जिसके अन्तर्गत गुजरात और दादर नगर हवेली के शैक्षिक मार्गदर्शन एवं गुणवत्ता युक्त शिक्षण के प्रत्यनशील है जो काफी प्रशंसनीय एवं आवश्यक कार्य है। आज के समय की मांग है क्यों कि यह हमारी सांस्कृतिक अवस्था में आ गई है। अत: अगले कुछ वर्षों में उसे संरक्षित एवं सहजा नहीं गया तो वह अस्तित्वविहिन होने के कगार पर है। इस कार्यक्रम के समन्वयक डॉ. सुरेश मकवाणा लोकवाद्य यंत्रों पर परम्पराओं की चिंतन के साथ एक प्ररेक कार्य कर रहे हैं। कलाओं के संरक्षण और विस्तार हेतु सभी कलाकारों को सहधन्यवाद जिन्होंनें अपनी वाद्ययंत्रों की कला का प्रायोगिक अनुभव संस्थान के विकास कार्य में लगाया है। यह कार्य नई पीढ़ी को उपयोगी होगा और लोकवाद्य को लम्बे समय तक जिन्दा रखने वाला साबित होगा सभी को तहदिल से धन्यवाद और शुभकामनाएं देता हूँ।

प्रो. जयदीप मण्डल
प्राचार्य, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल

अनुक्रम सूची

1. निवेदन
2. भूमिका
3. आयोजन कार्यशाला की समीक्षा
4. महाराष्ट्र के लोकवाद्य यंत्र की सूची
5. महाराष्ट्र के लोकवाद्य यंत्रों के कलाकारों द्वारा कार्यशाला-समीक्षा
6. छतीसगढ़ की कार्यशाला की समीक्षा
7. कलाओं के स्त्रोत केन्द्र के कलाकारों एवं स्त्रोत व्यक्तियों की सूची ।
8. संदर्भ पुस्तकें, संस्थाएं
9. फोटो गैलरी व समाचार पत्र, पत्रिकाएँ

निवेदन

भारत में विद्यालयी शिक्षा में अग्रसर एनसीइआरटी, नई दिल्ली की इकाई क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल द्वारा पश्चिम भारत की विभिन्न चित्रकलाओं, हस्तकलाओं, हस्तशिल्पों और लोक संगीत के वाद्यों पर पिछले छः सात वर्षों में निरंतर शोध-अभ्यास किया जा रहा है। भारत एक महान बहुसांस्कृतिक और कलाओं की अकूत विरासत लिये हुए है। कृषि और वन्य-पर्यावणीय परिवेश भारत की पहचान है। सेटेलाइट और तकनीकी विकास के बाद भी भारत की सांस्कृतिक विरासत में कोई महती परिवर्तन नहीं हुआ है। हाँ बदलाव जरूर आया है। किन्तु लोक संस्कृति, लोकगीत और लोक कलाओं का मूल स्वभाव अभी भी ग्राम परिवेश, जनजातीय क्षेत्र और घुमन्तु समुदायों में बसा हुआ है। लोक संस्कृति मौखिक और अब तकनीकी रूपों से पीढ़ी दर पीढ़ी संरक्षित होकर जिन्दा रही है। लोक संगीत की कोई स्क्रीप्ट, संकेत-लिपि या नोटेशन नहीं है फिर भी अपनी विरासत में रचीबसी लोकधुनों, लोक संगीत, लोकवाद्य आज भी हमें उसकी ओर खिंचते हैं।

लोक कलाएँ, लोकचित्र शैली, लोकवाद्य या लोकगाथाएँ कोई विद्यालय में नहीं सीखा जाता। पारम्परिक विद्याओं का बहुल रूप है। जब कोई आदिवासी जंगलों में लकड़ी, फलों के लोभ या पशुओं को चराने जाता है तब प्रकृति के ही विभिन्न माध्यमों से ध्वनि-संगीत सुनता है, फिर वह बॉस, पत्ते, लकड़ी या पत्थरों से संगीत पैदा करता है। कोई पूजा-प्रसंग या धार्मिक कार्यक्रम में समुदाय इकट्ठा होता है और गाने गाता है, नृत्य करता है या कोई संगीत के वाद्य बजाता है। बस ऐसे ही अपना श्रेष्ठ देकर

आनंद प्राप्त करता है। इस तरह की परम्पराओं को जानने और परखने के लिए रसिक ऑखें और खुले मन से देखना पड़ेगा तब जाकर बरसों से पली-बढ़ी लोक संस्कृति में समाहित मूल्यों, सौन्दर्यबोध, आन्नद, मस्ती और लोगों की वास्तविक संवेदनाएँ नजर आयेगीं। व्यक्ति के जन्म से मृत्यु तक के लगभग सभी स्तरों को लोककलाओं में पिरोया गया है। झुलागीत, लोकगीत, लोकनृत्य, लोकसंगीत और लोकवाद्यों में निहित जीवन दर्शन, मूल्यों, मान्यताएँ, श्रद्धा, प्रकृति के तत्वों के प्रति कृतज्ञभाव, मिथक, परम्पराएँ और समुदाय की महत्वकाक्षां आदि इसमें सम्मिलित है। हमने पश्चिम भारत की विभिन्न कलाओं को सहजने का उद्देश्य रखा है। जनपदों में रह रहे कलाकारों तक पहुँच बनाकर संस्थान में आमंत्रित किया गया और उनकी कलाओं का दस्तावेज कर डॉयूमेंट्री और लघु फिल्मे बनाई गईं।

महाराष्ट्र के लोकवाद्यों को ढूंढकर स्त्रोत पुस्तिका तैयार करना और असल लोकवाद्य के कलाकारों को संस्थान में लाना कोई आसान कार्य नहीं था। अलग-अलग भाषाएँ, वातावरण, परम्परा और लोकवाद्यों को हमने संस्थान के छात्रों से रूबरू करवाये, यह एक नवाचार अनुभव था। ग्रामीण और जनपद के लोकसंगीत के साथ हमारे छात्र संवाद करें, चर्चा करें, प्रश्न पूछें और नृत्यगान करें यह अदभूत सौन्दर्य अनुभव कोई शैक्षिक संस्थान में होता है, ऐसा कम ही होगा । हमारी इस स्त्रोत पुस्तिका में मध्यप्रदेश लगभग लोकवाद्यों के बारे में, शोध और विश्लेषणात्मक संवाद के पश्चात लिखा गया है । मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और गुजरात के कई लोकवाद्य यंत्रों में साम्य है किन्तु इसमें सिर्फ महाराष्ट्र और छतीसगढ़ के लोकवाद्यों का

उल्लेख है। लोककलाओं और लोकवाद्यों का दस्तावेज और शोधकार्य अनेक संस्थाओं जैसे जनजातीय और राज्य संग्रहालय, भोपाल विविध राष्ट्रीय कला संग्रहालयों और स्वयंसेवी संस्थाओं ने किया है। यह भी उसी तरह का लेकिन शैक्षिक परिपेक्ष्य का संदर्भ लिये हुआ कार्य जो विशेष रूप से महत्वपूर्ण है जिसमें छात्र-छात्राओं भावी शिक्षकों और वर्तमान अध्यापकों का जुड़ाव हुआ है। मुझे आशा है कि, लोक संस्कृति में लोकवाद्य सागर में बुन्दों की तरह है जो हमारे देश की सांस्कृतिक विरासत को सौन्दर्य प्रदान करते हैं, आनंद देते हैं और भावी पीढ़ी के लिए एक अनूठा संदर्भ प्रदान करेंगें। साथ ही लोकवाद्यों के संगीत में सिर्फ लय-राग या ताल मात्र नहीं लेकिन कई संभावनाएँ अस्तित्व में है जो अभ्यास से मिल सकती हैं। लोकसंगीत सहज है और शास्त्रीय या रागसंगीत का मूलाधार भी है। भाव-संवेदना दोनों की है। लोकवाद्यों के आलापों से भाव समाधि लगना स्वाभाविक है। वास्तव में लोकसंगीत का अभ्यास सहज नहीं है, यह भी सच है। नैसर्गिक स्वर-लय से हमारा रिश्ता गहरा बने और उसी धुनों से हमारी मातृभूमि की मिट्टी की महक जैसी संवेदनाएँ महसूस हो तो यह हमारा यह कार्य सफल प्रतीत होगा, यह अच्छा होगा, यह अच्छा तो है।

धन्यवाद

सुरेश मकवाना
सम्पादक

भूमिका

स्वर, ताल और लयों का उद्‌गम हमारें लोकवाद्‌य

डॉ सुरेश मकवाना

प्राचीन भारतीय संस्कृति परम्परा और कलाओं की अनुपम संपदा को आज हम 'विरासत'कहने पर आ गये हैं। क्योंकि विरासत तब हो जाती है जब उनसे दूर-दूर हो जाते हैं। जब अपनी पारम्परिक कलाओं और लोकसंगीत को संस्कारत और संरक्षण की पहल करने लगे हैं। यह चिन्तनीय विचार है। भारत की सांस्कृतिक विविधताओं की अनेक धाराएँ झरनों की तरह बहती हैं। उन्हीं में कुछ कलापूर्ण और सांगितिज्ञ समृद्‌धि की रसकीय और सौनदर्यपूर्ण आन्नद के परिचायक हमारे लोकवाद्‌यों की बात इस ग्रंथ में करने जा रहे हैं। इस प्रकल्प से पहले चरण में हमने मध्यप्रदेश के लोकवाद्‌यों का दस्तावेजीकरण किया है। हमारे समाज में लोकवाद्‌यों की सूरावलियाँ, निजानंद की अनुभूति और शिक्षा में सौन्दर्यदृष्टि का समावेश कहीं होता है तो कहीं न के बराबर है। दुर्लभ होने के कगार पर कई लोकवाद्‌य आ गये हैं तो कईयों का अब नाम शेष नहीं रहा है। अब जो भी बचे हैं उसे कैसे जीवित रखा जाए ? यह प्रश्न के साथ संदर्भ पुस्तक का बीजारोपण हुआ है। शोध के भागरूप हमारे वन्य प्रदेश के और ग्रामीण लोक समुदाय के कलाकारों की खोजबीन और उपेक्षित लोककलाओं और लोकवाद्‌यों का संरक्षण करना हमारा प्रमुख उद्‌देश्य है।

भारत के मध्य में विराजमान प्रदेश की अपनी विशेषता है। आदिकाल से यहॉ पर भील, गौंड, कोरकू, बैगा, भारिया आदि अनेक प्रमुख और गौण जनजातियाँ बसती

हैं। मानव संस्कृति की अमूल्य विरासत को आदिवासियों ने ही संभाला और आज भी मौखिक और वाचिक रूप से जतन कर रहे हैं। अपनी जीवनरीति, रहनसहन, प्रथाएँ-परम्पराएँ, धार्मिक क्रिया कर्म-अनुष्ठान, सामुदायिक विधि-विधान, भाषा, चित्रकलाएँ, लोकसंगीत, लोकनृत्य और लोक संगीत आदि का समायोजन हमारी संस्कृति है। हजारों वर्षों से सुरक्षित यह संस्कृति का इतिहास भी है और वाचिक-मौखिक, कंठस्थ लोकरूप भी है। आदिवासी, प्रकृति पूजक हैं। पहाड़ों और जंगलों में अपना निवास करते हैं। इनकी कलाओं में निर्दोष सरलता, सहजता और निजानन्द सदैव रहता है। चाहे लोकगीतों का गानहो, अल्हड़ नृत्य हो या निजी वाद्यों का वादन हो - आदि लोक हमेशा सांस्कृतिक संदर्भ के साथ जुड़ा रहा है।

लोकजीवन में प्रकृति और मानवजीवन एकदूसरे के पर्याय हैं। उनका भगवान स्वयं प्रकृति के तत्व हैं जैसे पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि, वायु, जंगल, पर्वत, झरने, नदियाँ, सूर्य-चन्द्र और तारे आदि उनके देव हैं। प्रकृति के साथ, प्रकृति की गोद में खेलते, गाते, नाचते और जीते आदिवासी सदियों से पारम्पारिक जीवन जीते हैं। प्राचीन काल के अनेक कलाओं का सृजन कर जीवन का उल्लास से भरते हैं। इसमें लोकसंगीत और लोकवाद्य प्रमुख हैं। भारत में प्रगैतिहासिक युग का प्रारंभ दो लाख से ज्यादा का ख्याल रहा है। जिसका अंतिम काल दस से आठ हजार वर्ष पहले का माना जाता है। जो अंतिम पाषाणकाल माना गया है। भारत में आये गये आदिमानव के अवशेषों में निवास, पत्थर के औजार, पत्थर शिल्प, प्राणियों के अस्थि और

पाषाण समाधि आदि पाँच हजार से सत्तर हजार वर्ष तक माना गया है। यह बात आदिवासियों को पाषाणकाल से यह सिद्ध करती है।

बात अब लोकवाद्यों की करत हैं। उनकी व्युत्पत्ति की करते हैं । लोकवाद्यों की रचना प्रक्रिया और ऐतिहासिक संदर्भ की करते हैं। प्राचीन भारतीय संगीत और अनेक लोकवाद्यों का उल्लेख वेदकाल और महाभारत-रामायण काल से किया गया है। किन्तु आदिमजाति को लोकवाद्य की शुरूआत उससे भी कई पहले से हो चुकी थी, यह भ सच है कि । 1954 में International Folk Music Council, ने लोकसंगीत को इस प्रकार व्याख्यायित किया था, “Folk Music is the product of a Musical tradition that has been evolved through the process of oral transmission” अर्थात लोकसंगीत एक ऐसी संगीत परम्पराओं से जन्मा है जो कठंस्थ या वाचिक परम्पराओं से लिप्त रहा है। आदिवासी संगीत और लोकसंगीत के संदर्भ में यह कथन सर्वधा सत्य है।

कलाओं का स्त्रोत केंद्र, आरआईई, भोपाल में पिछले छ: वर्षों से पश्चिम भारत के राज्यों की कलाओं, हस्तशिल्पों और लोकवाद्यों पर अनेक कार्यशालाएं आयोजित कर प्रस्तुतिकरण और दस्तावेज हुआ है | कोविद-19 जैसी महामारी के दौरान भी कार्यशाला आयोजित कर पारंपरिक कलाओं और संस्कृति को सहजने का कार्य संस्थान द्वारा हुआ है | यह एक नवाचारी कार्यक्रम है जिसके तहत राष्ट्रीय स्तर पर शोर्ट फिल्मों को पुरस्कार भी मिले हैं | हमारे यहाँ प्रतिभागी कलाकारों को पद्मश्री जैसे राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुके हैं | जिसमें भूरीबाई, दुर्गाबाई, अर्जुन सिंह धुर्वे आदि

शामिल है | इस कार्यशाला में ऐसे दुर्लभ लोकवाद्य पर काम होगा जिसे कुछ समय रहते संरक्षित नहीं किया गया तो वह विलुप्त हो जायेंगें | हमारे देश की लोकसंस्कृति और लोककलाओं का स्थान विशेष है | विविधताओं में एकता हमारी संस्कृति की रीढ़ की हड्डी के समान है | वर्तमान शिक्षा विषयों के स्थूल ज्ञान और माहिता को ज्यादा जोर देती है | छात्रों को रटने और मार्कस लाने के लिए लाखों रूपये खर्च करके रटा तोता बनाने की जैसे होड़ मची है | जीवन से जुड़ी व्यावहारिक बातें और शुद्ध जीवन की विभिन्न समज वर्तमान पीढ़ी में नहीं है | लोक परम्पराएं हमें जीवन का पाठ पढ़ाती है | नई शिक्षा नीति-2020 में भारत की कलाओं और संस्कृति को जो महत्वपूर्ण बात है वह कुछ इस प्रकार है|

- व्यक्ति का सर्वांगी विकास हो जिसमें जीवन के व्यवसायी विकास के साथ कला-संस्कृति और पारंपरिक रीति की आवश्यकता होनी चाहिए |
- कौशलों का विकास होना चाहिए | मानव समाज में निहित कलाओं, शिल्पों, पूर्वजों का संस्कार और मूल्यों का परिचय होना जरुरी है |
- व्यक्तित्व विक्स सर्वांगी रूप से होना चाहिए | जल, जंगल, भूमि और आकाश की पवित्रता सुनिश्चित करके उसका संरक्षण करना चाहिए | परिश्रम, हिम्मत, साहस और सौन्दर्य बोध हमारी शिक्षा में होने चाहिए |
- एनईपी-2020 कहती है स्कूली शिक्षा में पढाई का बोझ कम करके कलाओं, शिल्पों और संस्कृति को शामिल करना चाहिए | शैक्षिक संस्थानों और विद्यालयों

में स्त्रोत केंद्र खोलकर कलाकारों और कारीगरों को प्रोत्साहित करके सज्ज करना होगा |

- कला शिक्षा और कला समेकित शिक्षा से छात्रों में कलात्मक, सृजनशीलता और सौन्दर्य बोध का विकास सुनिश्चित करने की आवश्यकता है | इसीलिए इस तरह की कार्यशालाएं आयोजित करनी होगी | लोककलाएँ, आदिवासी कलाएँ और अतिप्राचीन कलाओं को जानने की आवश्यकता ऐसी कार्यशालाओं में मिलेंगीं |
- शिक्षा के सभी चरणों में प्रायोगिक अधिगम को अपनाया जायेगा और विविध विषयों के साथ कला और खेल को एकीकृत किया जायेगा |
- भारतीय संस्कृति और कलाओं में निहित मूल्यों और समृद्ध विरासत को और देखना होगा | वर्तमान युवाओं को इसकी सामाजिक, सांस्कृतिक और तकनीकी बाबतों के प्रति सजग करना होगा | जिससे हमारी भाषा, संस्कृति और ज्ञान को बढ़ावा मिलेगा |
- प्राचीन और सनातन ज्ञान की खोज आवश्यक है | आनन्द को सर्वोच्च लक्ष्य माना गया है उसे पुन: जीवित करना होगा | शिक्षा व्यवस्था में संगीत, नृत्य, शिल्पों और सांस्कृतिक लोकसाहित्य का चयन करना होगा |
- प्राचीन कलाओं, हस्तशिल्पों और लोक बांगमय को तकनीक से दस्तावेज करके प्रचार प्रसार करना होगा | हमने इसी मुद्दों की और देखते हुए कलाओं के स्त्रोतकेंद्र के तहत कार्य कर नई शिक्षा नीति के अमलीकरण की और एक कदम रखा है | पश्चिम के राज्य के अनेक लोकवाद्यों की यहाँ प्रस्तुति होगी साथ में

इसका वीडियोग्राफी की गई | क्षेत्र कार्य करके हम दुर्लभ लोकवाद्यों और कलाकारों तक पहुँच सके है | उपस्थित कलाकारों का साक्षात्कार करके लोकवाद्यों और उनके लोक समाज विशेषों की जानकारी प्रस्तुत होगी साथ में इसका वीडियोग्राफी हुई है | उपस्थित कलाकारों का साक्षात्कार करके लोकवाद्यों और उनके लोक समाज विशेषों की जानकारी मिलेगी |

संस्थान के सभी अध्यापकों, विद्यार्थियों और अन्य स्टाफ-कर्मचारीगण इस कार्यशाला का लाभ लेकर सुप्त और एकाकी जीवन में संगीत की सुरावलियों को महसूस कर आनंदभागी बन सकेंगें | विज्ञान, गणित, सामाजिक विज्ञान एवं भाषाओं में यह लोकवाद्य किस प्रकार एकीकृत कर सकते हैं, उसका अभ्यास करेगें और कुछ नवाचारी खोज करेंगें तो इस कार्यशाला की सफलता होगी |

डॉ. सुरेश मकवाना

कार्यशाला समन्वयक

<u>प्रथम आयोजन कार्यशाला की संक्षिप्त समीक्षा</u>

कार्यशाला – दिनांक 18 सितंबर 2023 से 20 सितंबर, 2023

कलाओं का स्त्रोतकेंद्र के अंतर्गत, संस्थान में पाँच दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया | संस्थान में भाषाओं में स्त्रोत केंद्र के तहत पिछले वर्ष मध्यप्रदेश और गुजरात राज्यों के लोक एवं आदिवासी लोकवाद्यों पर कलाकारों द्वारा प्रायोगिक कार्य किया गया था| इस वर्ष हम महाराष्ट्र और छतीसगढ़ एवं हिस्से में भ्रमण के साथ आदिवासी लोकवाद्यों पर वर्कशॉप करवाया | प्रथम स्तर पर हमने महाराष्ट्र के बयालीस कलाकारों को आमंत्रित किया था | इसमें वासुदेवा जनजाति कलाकारों के साथ लोक वाद्ययंत्रों व पारंपरिक वस्त्रों के साथ सहायक लोकवाद्य कलाकार उपस्थित रहे थे | जिसमें प्रमुख वाद्ययंत्र थे वे बारेया, मलांग, पॉवडा समुदाय के पारंपरिक वाद्य थे घाघडी, देव लकड़ी, देव दोवडी, डोवडू, तारपु, बुटी गिलहरी, किरचु, देव काठी (देव लकड़ी) नरहीली, झाँझ आदि थे वहीं अकोला जिले के भी कुछ वाद्ययंत्र उपस्थित थे जिसमें खपाट (कामड़ी) तुमुरो, सितार, चिपियों, खन्जरी, मंजीरा, केन्दरी, ढोल, कुण्डी, थाली, वाहली, ढोक, सारंगी (डॉग जिल) पाडरी, थाली वाद्य कहाडिया, डेस, सामबढिया, देव पाउरी, डॉक आदि के महत्वपूर्ण वाद्ययंत्रों के कलाकार की कार्यशाला में उपस्थित रहे थे | महाराष्ट्र के सभी संभागों से उन्हें आमंत्रित किया गया था | अपने आप में यह संस्थान के लिए दूसरा अवसर था जब किसी राज्य की प्रमुख लोकवाद्य यंत्रों का पाँच दिवसीय तक प्रदर्शन हो सारे कलाकारों की कलाओं को वाद्य बजाते हुये प्रदर्शन हो सारे कलाकारों की लोकवाद्य के माध्यम से हमने इस

कार्यशाला में शिरकत की और एक राज्य के कला संस्कृति और सभ्यता परम्परा रूबरू हुए थे | भोपाल शहर के एन.सी.ई.आर.टी. के आर.आई.ई. भोपाल के कई विद्यवानो ने इस कार्यशाला में मुलाकात करके खुशी जाहिर की साथ ही साथ कलाकारों से उस हर एक वाद्ययंत्रों का परिचय प्रश्नोत्तरी के माध्यम से हैण्डबुक के लिए टंकित किया ताकि हर एक वाद्य को उसकी आंतरिक बनावट के साथ-साथ उसकी उपयोगिता को पुस्तक के माध्यम से सब को बता पाये और आई.आई.ई. स्टूडियो उनकी टीम के माध्यम से आदिवासी लोकवाद्यों का विडिओग्राफी की है | कलाकारों से उसकी सभ्यता, परम्परा उपयोग आदि विडिओग्राफी और आडियो के माध्यम से संस्थान में रखी है| कार्यशाला के अंतिम दिन कलाकारों के माध्यम से विद्यवानों और छात्राओं के रूबरू करवाया और नृत्य का आयोजन किया | नृत्य के अंत में बिदाई समारोह में सभी लोकवाद्य कलाकारों ने डॉ. गणेश निसरता, श्री अरविन्द भाई और योगेश भाई जी ने खुशी व्यक्त की और इस तरह की कार्यशालाओं की नियमित आयोजन करने की बात कही इसके साथ प्राचार्य और प्रो. चित्रा सिंह ने भी अपने भावों को व्यक्त किया धन्यवाद ज्ञापित किया इसके बाद आई.आई.ई. के सभी B.A., B.Ed. व अन्य विषय के छात्र-छात्राओं ने भी इस कार्यशाला में सहभागिता की बात बताई की उन्होंने क्या सीखा समझा उसकी उपयोगिता के बारे में बताया और लोकवाद्यों और लोक कलाकारों से चर्चा कर जानकारी प्राप्त की |

कार्यशाला के प्रमुख बिंदु: कलाओं के स्त्रोत केंद्र में महाराष्ट्र के लोकवाद्यो का नाद आदिवासी और लोक जीवन सम्पदा एक विलक्षण जीवनानूभुती है |

आदिवासी लोककला रूपों का अपना अनूठा लोकसंसार है | आदि मानव के अंतर्मन की यथास्थिति गहराई के साथ सादगी और कल्पना का चित्रात्मक और सांगीतिक संयोजन गढ़ने में दिखाई देती है | जीवन के आनन्द, उल्लास, कलाभाव और नैसर्गिक आधार को अपने गायन, वादन, नृत्यों और चित्रों में बयान करना मानवजात ने आदिवासियों से प्रारंभ किया था | दरअसल हमारे लोक-आदिवासी भाई-बहन प्रकृति के सान्निध्य में बसे हैं | अपने दैनिक जीवन, संस्कृति और कला को उन्होंनें संजोया है | कभी-कभी यह बात होती है कि जिन लोगों को हम आदिवासी कहते हैं, शायद वह सोचते होंगें हम कैसे लोग हैं ? यहाँ शहरी या सभ्य समाज के साथ सहज भेद दिखाई देता है | उसमें एक बुनियादी भेद जो मुझे नजर आता है वह यह है की उनकी अंतर निर्भरता बाजार पर आधारित नहीं है, प्रकृति और रोजमर्रा के जीवन से कलाओं को खोजना और उससे अपने जीवन को व्यस्त रखना | दूसरा प्रकृति के साथ आदिवासी का सुंदर तालमेल होता होता है | प्रकृति से उतना ही लेते है जितना उसकी आवश्यता होती है | लोकजगत में आदिवासी अपनी कला से पहचाने जाते हैं | हमने इस कार्यशाला में हमारे महाराष्ट्र के लोकवाद्य कलाकारों की बात करने की कोशिश की है |

कलाओं की कोई वैश्विक एकरूपता नहीं होती | भावनाओं की अभिव्यक्ति से कला की अनंत रूप शैली जन्म लेती है | हमारे नृवंशशास्त्री और समाजशास्त्री कलाओं की ऊपरी एकरूपता की चेष्टा करते हैं पर वास्तव में ऐसा नहीं होता | भाव तो सभी मनुष्यों का एक होगा किन्तु कलाओं में प्रदेशभेद और संदर्भ अलग-अलग होता है |

महाराष्ट्र और छतीसगढ़ राज्य भारतवर्ष में बहुधा आदिवासी अंचल का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र कहलाता है | अजंता या भीम बैठिका के शैल चित्र से लेकर झाबुआ-छोटाउड़ेपुर का पीठोरा चित्र-भील चित्र शैली हो या सीधी-शहडोल का सैला नृत्य हो, कच्छ-सौराष्ट्र की सुर साधना या रास-गरबा हो, हर क्षेत्र में लोक और आदिवासी संस्कृति और जनपद की कलाओं से जनजीवन सरोबर रहा है| हमारे आदिवासी और लोक संगीत के कलाकारों में महिलाएँ और पुरुष सहभागीदार होते हैं | लोकवाद्य, लोकगीत, चित्रकला और पारंपरिक अनुष्ठान आदि में दोनों की उपस्थिति रहती है भील लॉक समुदायों से बरैया, कुनकना,भील, वसावा, गामित, कोंकणी, कुनबी, ढोढीया जैसी अनेक आदिवासी जातियां निवास करती हैं | सभी की अपनी अपनी लोकवाद्य कला-संस्कृति की विशेषता है | अनेक आदिवासी समुदाय में बहुधा मिथकीय अनुष्ठानों के साथ बनाये लोकवाद्यों को बजाए जाते हैं | लिखंदरा जहाँ एक और लिखने वाले के लिए प्रयुक्त होता है तो चित्र बनाने वाले कलाकारों को भी लिखंदर या लखिन्दरा कहते हैं | उसी समय ढोल या माँदल बजाने वाले को बजैल या ढोली कहते हैं | हमने इस वर्ष की कार्यशाला इसी प्रदेशों के लोकवाद्यों पर करने का तय किया है | लोकवाद्यों की पहचान करके क्षेत्र कार्य उपरांत उनका संस्थान के छात्रों और शिक्षकों के सामने प्रदर्शन और डिजिटल दस्तावेज करना महत्वपूर्ण आयोजन है | साथ-साथ प्रत्येक लोकवाद्यों की संरचना, बनावट, प्रस्तुति, ताल-राग-चाला और वर्तमान स्थिति पर शोध साक्षात्कार कर स्त्रोत पुस्तिका लिखने का उपक्रम भी है |

महाराष्ट्र की कार्यशाला का संक्षिप्त विवरण

कार्यशाला :- दिनांक 17 नवंबर 2023 से 22 नवंबर 2023

कलाओं के स्त्रोत के केन्द्र के अन्तर्गत संस्थान में पाँच दिवसीय (दिनांक 17 नवंबर 2023 से 22 नवंबर 2023) कार्यशाला का आयोजन किया गया । संस्थान में कलाओं के स्त्रोत केन्द्र के तहत इस बार महाराष्ट्र के लोक एवं आदिवासी लोकवाद्य यंत्रों पर प्रायोगिक कार्यशाला कलाकारों के माध्यम से किया गया। इससे पहले गुजरात एवं दमन एवं दीप कच्छ के आदिवासी क्षेत्र के प्रमुख लोकवाद्य को उजाले में लेकर आये पहले महाराष्ट्र के सभी जिलों से आस-पास के भागों में जो विलुप्त हो रहे आदिवासी लोकवाद्य यंत्र उनकी परम्परा, सभ्यता, संस्कृति, उत्सव, त्यौहार आदि गतिविधियों को जनमानस और कलाप्रेम और हमारी सभ्यता छात्र-छात्राओं तक कैसे पहुँचाएं ऐसा प्रयास है।

अकोला, नंदुरबार जिले से तीस लोकवाद्यों के साथ कलाकारों व सहायक कलाकारों को अमंत्रित किय गया । प्रथम दिन प्राचार्य प्रो. मण्डल सर और कार्यक्रम की अध्यक्षत कर रही प्रोफ चित्रा सिंह ने कार्यक्रम का उद्घाटन किया उनके साथ डॉ सुरेश मकवाना (कार्यक्रम समन्वयक) वरिष्ठ शोध साहित्यकार, वसंत निरगुणे, डॉ श्रीकृष्ण ककड़े, श्री डॉ प्रवीण पांडेया, प्रोफ रमेश बाबू, प्रोफ निधि तिवारी, प्रोफ चित्रा सिंह एवं डॉ मोनिका सिंह, डॉ नितिन रामटेके तथा महाराष्ट्र क्षेत्र से आये विशेषज्ञ के साथ सभी विभागाध्यक्ष, RIE कलाकार भी उपस्थित थे । उद्घाटन के बाद प्राचार्य द्वारा सुन्दर वचन से सम्बोधन दिया गया जिसमें उन्होंनें प्रसन्नता दिखाई कि आप लोक हमें अपना कीमती समय दे रहे हैं। हम सब जानते हैं कि यह सूचना क्रांति का दौर है जिसने संचार के नये-नये तरीके और साधन मुहैया कराये है, फिर भी सच्चाई यह है कि तमाम पत्र-पत्रिकाओं और चैनलों के बावजूद बहुत कुछ ऐसा है जो अनसुना अनदेखा और अनकहा है। खासकर लोकवाद्य, लोक परम्परा जो हमारे समाज से दूर होता जा रहा है। जिसे हमें संजोकर रखना और संकलित करना अतिआवश्यक है और लेखन का काम होना चाहिए।

इसी हम में प्रो. चित्रा सिंह अध्यक्षता और प्रो. निधि तिवारी जी ने भी अपने मन की बात लोकवाद्य कैसे विलुप्त हो रहे हैं । कैसे उन्हें सभी लोगों और समाज के सामने शिक्षा के माध्यम से लाया जाये आमंत्रित लोकवाद्य कलाकारों को बहुत प्रशंसा कि वे आम लोगों से कितने अलग है। हमारी सभ्यता और परम्परा को सम्भालकर रखे है और इतनी दूर से अपने घरबार से दूर अभी भी लोगों और समाज को लोकवाद्य की जानकारी दे रहे हैं। बहुत प्रसन्नता की बात है । इस कार्याशाला में लोकवाद्य है किरचु, बुटी, रावण हथ्था, शहनाई, ढोल (आमक), नरहीली, संतार, राम सागर, भूंगल (मादा और नर) सांरगी, मोरचंग, मोरली, ढोल (कच्छ) ढोलक मंजीरा, घडो-गमलो, डाक, कुण्डी, पिहो (बांसूरी) ढोलिया, चिमटा (सिपीयो) सामकीया (सामडियो), खपाट, ढोलकी, तमूरो, थाली, ढॉक, देरा, कहाडिया, कहाणी, पाउश, देव पावरी, घांघडी, देव लकड़ी, देव डोवरी, डोवडू, तारपू, ढोल बड़ा और झाँझ शामिल हैं। कलाकारों ने पाँच दिन तक उनके बारे में उसका इतिहास, सभ्यता, परम्परा और रचना (प्रक्रिया) बनावट आदि के बारे में शिक्षकों और विद्यार्थियों को अवगत कराया । दूसरे और तीसरे दिन कलाकारों ने वाद्ययंत्र को बजाकर नृत्य किया और छात्र-छात्राओं को भी शामिल किया । उन्हें भी इसके बारे में बजाना और बनाना सीखाया। यह भी बताया कि हमारी सभ्यता को आप लोगों को बचाना है। इसका उपयोग किस प्रकार आने वाली सभ्यता को करना चाहिए शिक्षा के क्षेत्र में कैसे इसका उपयोग है। ये सब प्रश्नोउत्तरी के माध्यम से छात्र-छात्राओं व शिक्षकों ने लिखे ताकि लोक वाद्ययंत्रों पर पुस्तक बन सके और कलाप्रेमी और हर एक वर्ग के लोगों तक जाये पड़े और समझे। हमारी संस्कृति को कार्यक्रम में स्टूडियो ने भी अपनी कला का प्रदर्शन किया। उन्होंनें पूरी टीम के साथ हर एक वाद्ययंत्र और कलाकार का इंटरव्यू लिया ताकि उस पर भी शोर्ट फिल्म भी बन सके। जिससे समाज में यह भी दिखाई दे और प्रचार-प्रसार हो।

अन्तिम दिन समापन सत्र में सभी वाद्य कलाकारों को सम्मान प्रमाण-पत्र के समापन किया। समापन सत्र में स्त्रोत कलाकारों ने अपने मन की बात कही।

आई.आई.ई. के बीए बीएड, B.Ed. और BSc B.Ed. व विद्यालय के अन्य विषयों के छात्र-छात्राओं ने अपनी खुशी को सबके सामने बताया कि, वे किस प्रकार अपनी सभ्यता और संस्कृति को बचाना जरूरी है। ताकि हम अपनी विरासत वाद्ययंत्रों को बचा सकें । हम सबने लोककलाकारों से चर्चा और जानकारी प्राप्त की । तुरंत बाद बसंत निरगुणे वरिष्ठ शोध कलाकार ने अपने लोककला, वाद्य आदि की यात्रा के बारे में बताया कि किस प्रकार लोक वाद्य को शरीर से मन में जोड़ते हैं और हमारी परम्परा को हमारे पूर्वजों से हम तक आ रही है। और वर्तमान में इसकी उपयोगिता और संग्रह किया जाये । अंत में श्री सुरेश मकवाना (कार्यक्रम समन्वयक) के माध्यम से धन्यवाद ज्ञापित किया। सारे वर्कशॉप का संस्थान के स्टूडियो संभाग द्वारा डॉक्यूमेंटेशन किया गया है। जिसमे इस वर्ष का एनसीईआरटी आईसीटी मेले में चार शॉर्ट फिल्मों को भेजा गया था। उसमे से वासुदेव को बेस्ट शॉर्ट फिल्म की श्रेणी में पुरस्कार मिला है । यह संस्थान और हमारे लिए एक उपलब्धि समान है ।

कार्यशाला 2- महाराष्ट्र राज्य के लोकवाद्य यंत्र और कलाकारों की सूची

दिनांक 17 नवंबर 2023 से 22 नवंबर 2023

1. श्री अनंतकुमार शिवाजी साळुंखे
2. रमेश मनोहर यादव
3. संभाजी गणपती जाधव
4. संजय दत्तात्रय मोहिते
5. लक्ष्मण कृष्णा तांबिरे
6. संजय शंकर कांबळे
7. देविदास गुलाब शिवणे
8. जीवनलाल रामभरोसे शिवणे
9. श्यामसुंदर जगन्नाथ बर्हे
10. रामखिलोन शिवदास मुकुटमणी
11. ओशोराम पंछीलाल मुकुटमणी
12. तुळशीदास बद्री शिवणे
13. कन्नूलाल विटोरे
14. श्री मछिंद्र डुकरे
15. विकास विनायक साठे
16. तुकाराम बन्सी बलैया
17. आसाराम रूपचंद विटोरे
18. प्रल्हाद कद्रे
19. देविदास वास्ठर
20. परमेश्वर भांडे

दि. 20, 21, 22 नवंबर 2023

1. देविदास झीनू डावर
2. राधेश्याम पालछा खरत
3. बद्या सोन्या पवार
4. तेरसिंग उदला वास्कले
5. लालसिंग खजान डावर

6. सीताराम गंगाराम पावरा
7. निलेश पाकदुणे
8. किसन श्रावण गवई
9. राजाराम बुधाजी खरात
10. प्रल्हाद श्रावण गवई
11. नारायण शिंदे
12.पुरूषोत्तम सुखदेव पवार
13. गोपाल किसनराव सोळंके
14. मंगेश किसन घोपे
15. अतुल हरिश्चंद्र हाडोळे
16. अनिल हिम्मत हाडोळे
17. प्रशांत रामदास शेगोकार
18. आकाश ज्ञानेश्वर पवार
19. राजेश रामकृष्ण हाडोळे
20. रवींद्र अजाबराव खलोकार
21. मंगेश प्रकाश गोरडे
22. सतीश वामनराव शेगोकार

आंतरिक विषय-विशेषज्ञ (RIE भोपाल)

1. प्रोफ चित्रा सिंह अध्यक्ष विस्तार शिक्षा विभाग
2 . डॉ. एन.सी. ओझा, सहायक प्राध्यापक, स्टूडियो
3. डॉ. अरुणाभ सौरभ, सहायक प्राध्यापक, DESSH
4. डॉ नितिन रामटेके
5. डॉ एस सेबु
6. डॉ संजय पंडागले

महाराष्ट्र के लोकवाद्य यंत्र की सूची

1. किरचु-चिपली
2. बुटी
4. शहनाई/सनई
5. ढफली/डफ़
6. चौउंडके
7. एकतारा
8. तुनतुने/चौंड़का
9. तुतारी/दुदुंभी
11. ढोल (बारेया)
14. ढोलक-ढोलगी
15. ताल/मंजीरा
16. घुंघुरया/घुँघरू
18. कुंडी/टिमकी
19. बांसुरी
20. खनजेरी
21. ठाती/थाली
22. सामकीया (सामडीयो)
24. माँदल
25. तंबूरा
26. पीयू/ दुही बाँसुरी
27. पॉन्ली/छोटी बाँसुरी
28. ढफड़ा
29. पिपली
30. पिलमपोया
31. नाल
32. झांझ
33. झपाँग/झांझल
34 विना/वीणा
35. सुर
36. चौघड़ा
37. दोनवाटी/एकतारी
38 किंगरी
39. करताल
40. तुंबड़ी
41. चिपड़ी/चटुकला

कार्यशाला-3 <u>छतीसगढ़ राज्य की लोकवाद्य यंत्र कलाकारों की सूची</u>

दिनांक 22.1. 2024 से 27.1.2024

संस्थान में द्वितीय स्तर पर छतीसगढ़ के लोककलाकारों और लोकवाद्यों के ऊपर छ दिवसीय कार्यशाला का आयोजन दिनांक 22.1.2024 से 27.1.2024 तक किया गया । जिस मे समग्र छतीसगढ़ राज्य के भिन्न भिन्न संभागों से लोककलाकारों को आमंत्रित किया गया । कुल छैयालीश कलाकारों के साथ विषय विशेषज्ञ उपस्थित हुए थे । सभी कलाकार अपने साथ लोकवाद्य भी लकर आए थे। यह एक अभूतपूर्व प्रकार का कार्यक्रम एक शैक्षिक संस्थान में हुआ।

छतीसगढ़ के लोककलाकार:

1 श्री दयाराम मरकाम, अंतागढ़, जी कांकेर
3. श्री ईश्वर कुलदीप " "
4. श्री जगदीश कुलदीप " "
5. श्री राधेश्याम गंधर्व जिला दुर्ग
6. श्री हेमलाल साहू जी- दुर्ग
7. श्री भरत तंडियर जि कांकेर
8. संतराम ध्रुव कांकेर
9. श्री रतन आंचला कांकेर
10. श्री सालिकराम साहू "
11. श्री रामकुमार वर्मा जि- दुर्ग
12. श्री अमरसिंह जि -धमतरी
13 श्री पोखन "
14. श्री संजु सेन जि बलोद
15. श्री मंगल राम
16. श्री शुभम यादव
17. श्री अभिनाथ यादव
18. श्री सुरेन्द्र कुमार यादव
19. डोनेश्वरी जोशी
20. निधि
21. श्री इशर यादव "
22. डॉ परमानन्द पाण्डेय जि- खेरागढ़
23. श्री नंदू सिंह खुशरों
24. श्री चंद्र कुमार ध्रुव जि- बस्तर

25. श्री जगन्नाथ निषाद कुम्हारी, खाजेरी लोकवाद्य
26. श्री संजु पेवरों चिटकीली, चटकोला
27. श्री गुरुदयाल रंजू लोकवाद्य
28. श्री राजेश गनोडवाले जि. रायपुर
29. डॉ. मोनिका सिंह, खेरागढ़
30. डॉ विनीता राजपूत जि खेरागढ़
31. श्री विनोद यादव संकरा, जिला बालोड
32. श्री रामेश्वर निषाद ग्राम परसाई, बलोद
33. श्री बलराम कामड़ी, ढबड़ी, बलोद
34. श्री वसराम मंडावी ग्रा ढाबाडीह, जि बालोड ''
35. श्री नरेश साहू '' '' ''
36. श्री धर्मेन्द्र नेताम, '' '' ''
37. श्री रागी भाई नरेंद्र यादव
38. श्री हिरालाल यादव बांस वादक ''
39. श्री छायांक यादव ''
40. श्री चमरु यादव ''
41. श्रीमती मीरा ''
42. श्रीमती शांता ''
43. श्रीमती बुधानतिन ''
44. डॉ वसंत निरगुने, निवृत्त लोक-संशोधन अधिकारी, भोपाल
45. डॉ नितिन शीराले, अद्यापक, आरआईई, अजमेर
46. श्री भरत अग्रावत, अमरेली, गुजरात
47. श्री धर्मेन्द्र रोहर, बांस कलाकार, भोपाल
48. श्री वरुण मुदगल, भोपाल, स्टूडियो प्रभाग

<u>आंतरिक स्रोत व्यक्तियों</u>-

1. प्रो. चित्रा सिंह, एच,ओ.डी. DEE, RIE-Bhopal
2. डॉ. अरुणाभ सौरभ, DESSH
3. डॉ. एन.सी. ओझा, स्टूडियो/C/c, DEE
4 . डॉ. एस. शेबू, DESSH

5. डॉ. श्रुति त्रिपाठी, DESSH RIE
6. डॉ नितिन रामटेके
7. डॉ रामझलक यादव
8. डॉ कुलवीर यादव
10. स्टूडियो टीम श्री अकरम, श्री अंकुश साहू, श्री अंकेश और श्री गौरव गुप्ता

कुछ महत्वपूर्ण लोकवाद्य की जानकारी

झाँझ

झाँझ (Cymbal) एक लोकवाद्य यंत्र है। जो गोलाकार समतल या उत्तलाकार धातु की तश्तरी जैसा ताल वाद्य है। यह एक दूसरे से रगड़ते हुये टकराकर बजाया जाता है। ताँबे, कलई (टीन) और कभी कभी जस्ते के मिश्रण से बने दो चक्राकार चपटे टुकड़ों के मध्य में छेद होता है। झाँझ को करताल भी कहते हैं। झाँझ को तीज त्यौहारपर, नवरात्रि पर्व, होली पर्व, गणपति उत्सव, दीपावली व अन्य भजन आदि सामाजिक प्रसंग लोकगीत ताल आदि जगहों पर बजाया जाता है। पौराणिक कथा में नारद मुनि नारायण-नारायण करते समय एक हाथ में करताल तथा दूसरे हाथ में भी करताल ही होता है। झाँझ विभिन्न वाद्ययंत्रों के साथ उसके सहयोगी बनकर कार्य करता है। भजन या आदि उत्सवों मे ढोल, डमरू, मंजीरा, तबला आदि के साथ इसे बजाया जाता है।

झाँझ वाद्ययंत्र में कच्छी घोड़ी नृत्य में इसका प्रयोग किया जाता है। झाँझ एक लयबद्ध वाद्ययंत्र है जिसमें धातु के बजने वाले टुकड़े लगे होते हैं और यह पीतल या कांस्य धातु से बना होता है।

प्रक्रिया :- यह झाँझ वाद्ययंत्र को बनाने के लिये लौहार धातु को गलाकर एक गोलाकार साँचे में डालकर बनाया जाता है। जब धातु से गोलाकार बनता है तो उसको ढोक-पीटकर उसे आकार दिया जाता है। आकार देने के बाद बीच में छेद किया जाता है। और रस्सी और कपड़े की सहायता से उस छिद्र में डाकर बाँधा जाता है। और ऐसे ही दो झाँझ बनाये जाते हैं।

शब्दार्थ :
1. रगड़ना - एक दूसरे से टकराना
2. धातु - खनिज का मिश्रण

ढोल (आनक, कमल) डिडिंम

परिचय : -

भारतीय संगीत साहित्य में मढ़े हुए यंत्रों को अवनध्द-वाद्य कहा गया है। अवनध्द का अर्थ होता है मढ़ा हुआ। अत: वे वाद्य जिनमें पात्र या ढांचा चमड़े से मढ़ा होता

है अवनध्द वाद्य कहलाता है। ढेलों के लिए हालांकि यह एक आम नाम है। इनके लिए अन्य नाम भी हैं, पुष्करजिसका अर्थ भी ढोल होता है। ढोलों के विकास से जुड़ी ओर उनमें सहायक दो कलाएं हैं। काष्ठ कला और कुम्हारी। ढोल बनाने के प्रारंभिक तरीकों में से एक था, पेड़ गिराकर उसके अंदर की लकड़ी खुरच लेना और इस तरह आसानी से एक खोल मिल जाता था । इसके एक या दोनों ओर चमड़ा मढ़ कर ढोल बना लिया जाता है।

शब्दार्थ : I. होली प्रकट करना - जलाना (होलिका दहन)

2. होरिया - होली नृत्य

3. चाला - स्टेप एक के बाद एक

अनेक कारणों से ढोलों का सदैव सांकेतिक एवं प्रतीकात्मक महत्व रहा है। अनेक जनजातियों में उनसे जुड़े विशेष रिवाज हैं। वैदिक रीति में भी ढोल विशेषकर दुदुंभि को महत्वपूर्ण स्थान मिला है। अर्थवेद में इसकी स्तुति है एक लंबी ऋचा का अंश इस प्रकार है -

“ओ दुंदभि हो तो वनस्पति से बने हो, ध्वनि में श्रेष्ठ हो, नायक हो, शेर की दहाड़ जैसे तुम्हारे घोष से शत्रुओं में भय उत्पन्न होता है| विजय की आकांक्षा होती है| जैसे गायों के बीच सांड विचरता है ऐसे ही शत्रुओं के बीच तुम निर्भय घूमते हो मृगचर्म चढ़ी दुंदभि से युद्ध के देवता शत्रुओं को डराते और पराजित करते हैं” | ढोल केवल युद्ध का ही वाद्य शांति और धार्मिक रीतियों में भी वह बड़े महत्त्व का है | कई धार्मिक कार्यों में ढोल बजाया जाता है | सौराष्ट्र में विभिन्न गाँव में फाल्गुन सूद पूनम की रात में जब होली प्रकट की जाती है | तब ढोल को बजाया जाता है | नवरात्रि पर्व के दौरान भी जब गरबा होता है तब ढोल को बजाया जाता है | नवरात्रि पर्व के दौरान भी जब गरबा होता है तब ढोल को बजाया जाता है | इसके साथ-साथ लगन (शादी) पुत्र/पुत्री जन्मोत्सव के समय भी इस ढोल लोकवाद्य का उपयोग गुजरात में बजाया जाता है | ढोल का उपयोग सामाजिक प्रसंग, सौराष्ट्र के अंर्तगत सप्तमी, अष्टमी, मैले, दीपावली, अडियारस (ग्यारस) आदि समय पर बजाया जाता है और नृत्य महिलाओं द्वारा किया जाता है | ढोल का उपयोग गाँव के ऊपर कोई आपदा आ जाती है तो ढोल गाँव के लोगों को इकठ्ठा करने में उपयोग होता है | साथ ही साथ संदेश का भी इस लोकवाद्ययंत्र का उपयोग किया जाता है | इसी

प्रकार गुजरात के अन्य हिस्सों में भी ढोल को अलग-अलग प्रसंग/रीतिरिवाज, त्यौहार, सामाजिक धार्मिक प्रसंगों पर बजाया जाता है |

गुजरात के छोटा उदयपुर में भी बड़ा ढोल का विशेष महत्व है | बजाने के रिदम, ताल, बनावट ये सब कच्छ से बिलकुल अलग है | लोक जनजाति लोग नृत्य के समय ढोल का उपयोग करते हैं | ढोल के साथ नृत्य बड़े उत्साह से किया जाता है| ढोल आदिम जाति से हुआ है | पूर्व पाषाण काल से वैदिक काल तक इसके प्रमाण मिलते है | इसके बाद जनजातियों से होकर लोक समाजों और नृत्यों में समान रूप से प्रचलित और मान्य है |

प्रक्रिया - ढोल बनाने की प्रक्रिया अलग-अलग जगहों पर बहुत होती है | उनकी बनावट भी अलग होती है | सौराष्ट्र में अलग होती है | वही छोटा उदयपुर में भी अलग होता है | पेड़ की पूजा करके फिर उसे काटा जाता है | पेड़ से माफ़ी माँगी जाती है कि हे वृक्ष देव हमें माफ़ करना हम अपने दैनिक उपयोग में लाने के लिये आपका उपयोग कर रहे हैं | इस प्रकार बोला जाता है | लकड़ी को काटकर उसे पन्द्राह दिन सुखाया जाता है और यंत्रों के माध्यम से लकड़ी को अन्दर से खाली (खोखला) किया जाता है | इस लोकवाद्य यंत्र को बनाने के लिये अलग-अलग लकड़ी का उपयोग किया जाता है, जिनके नाम इस प्रकार हैं : -

1. सेमल, 2. सागौन, 3. आम, 4. शिमेण (शीशम) |

खोखला करने के बाद में मवेशी की खाल (बकरा) निकालकर उसे सुखाकर उस खाल को साफ़ किया जाता है | साफ़ करने के बाद चमड़े को ढोल के खाली भाग को भाग को चमड़े पर आकार लेना होता है | आकार लेने के बाद चमड़े को ढोल पर मढ़ा जाता है और सुतार ढोल को रस्सी से बाँधा जाता है | ढोल के बीच में रस्सी से अलग-अलग रंगों के माध्यम से डिज़ाइन बनाई जाती है और डंडे के माध्यम से बजाया जाता है| एक ढोल को बनाने के लिए 15 दिन का समय लगता है | ढोल का वजन 20 से 50 किलो का होता है जिसकी लम्बाई 35 इंच यानि 03 फिट होती है | चौडाई इंच और सरकल (राउंड) 25 इंच की होती है | ढोल का उपयोग जब गाँव के मुखिया का देहांत हो जाता है तो उसकी याद में भी ढोल लोकवाद्य यंत्र बजाया जाता है | चाला, इन्द्र पूजा घेरिया में भी इस लोकवाद्य यंत्र को बहुत याद किया जाता है |

तारपू

तारपू एक सुषिर जनजातीय लोकवाद्य यंत्र की श्रेणी में आता है | यहाँ गुजरात राज्य के दक्षिण गुजरात के अंतर्गत बजाया जाता है | तारपू वाद्ययंत्र चौधरी समुदाय के लोग बजाते हैं | कोई उत्सव हो, त्यौहार या देवपूजा तारपू लोकवाद्य बजाया जाता है | शादी, अनुष्ठान, तीज-त्यौहार आदि समय लोक वाद्ययंत्र तारपू को बजाया जाता है | इस वाद्ययंत्र को गामत और कोकूड़ा समाज के लोग इसको खुद बना लेते हैं | जबकि कोई और समुदाय इस वाद्ययंत्र को कोई और नहीं बना सकता है | तारपू का स्वर कई रात तक काफी दूर से सुना जा सकता है | अश्विन (अक्टूबर) माह के आरंभ से हर रोज सूरज ढलते ही तारपू पर नृत्य किया जाता है | वादक गोला बनाकर बीच में खड़े हो जाते है और नृतक उनके इर्दगिर्द गोल-गोल घूमते हैं | तारपो-वादक मुड़ते है तो वे भी मुड़ जाते हैं, वे कभी भी तारपू-वादक की और पीठ नहीं करते हैं, जहाँ धार्मिक अवसरों प्रवचन होता है | और उत्सव के अंग के रूप में उनका मुकाबला भी होता है | तारपू लोकवाद्य यंत्र जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है | यह वाद्ययंत्र चौधरी समुदाय के लिए पहचान और गरिमा है | इस लोकवाद्य यंत्र का भविष्य अत्यंत चिंताजनक होता जा रहा है | नई पीढ़ी इस लोकवाद्य को कम बजा रही है | अपने पिता से सीखना बहुत कम हो गया है |

प्रक्रिया : -

तारपू लोकवाद्य बांस और ताड़ के पत्तों से बनाया जाता है | इसके तीन स्वरुप होते हैं |

1. छोटा तारपू
2. तारपी
3. बड़ा तारपा

बांस जो कि लम्बाई के अनुसार डेढ फीट लम्बा लिया जाता है | उसको अन्दर से बिलकुल खोखला किया जाता है | उसके ऊपर नाप-नाप कर छिद्र किए जाते हैं | स्वर के लिए बांस के एक तरफ के हिस्से में बांस की चीप लगाई जाती है जो स्वर निकालने के काम आती है | ताड़ के पत्तों को सुखाकर बांस के दोनों और लपेटे जाते हैं | बांस के सामने वाले हिस्से को बड़ा रखा जाता है | बांस के ऊपर लपेटा जाता है तो धागों के उपयोग से उसे एक-एक दूरी पर बाँधा जाता है ताकि कहीं से फूँक

के प्रेशर से खुले नहीं और एक अच्छी लय संगीत निकले | कलाकार इच्छा अनुसार फूँक मारकर लय, ताल, छेद के ऊपर अपनी ऊँगलियों के माध्यम से अलग-अलग धुन निकल सकते हैं |

NCERT ने एक बहुत अच्छा कदम उठाया है | कोई भी लोकवाद्य को समाज और कलाकार ही जिन्दा रख सकते हैं, ऐसी कार्यशालाएं समय-समय होनी चाहिए ताकि इस लोकसंगीत को लोगों, जनमानस तक पहुँचाया जाये |

शब्दार्थ : -

1. प्रवचन - कथा, कहानी
2. देवपूजा - उस समुदाय के भगवान, इष्ट देव
3. इर्दगिर्द - इधर उधर

नमूने केलिए प्रश्नावली- **खंजिरी**

1. लोक वाद्य का नाम (समाज–लोगों मैं प्रचलित लोक और शास्त्रीय नाम; लोक वाद्य का अन्य पर्यायवाची नाम) उमकी टमकी (खंजिरी) धोरपडच्या चमडयाने बनविला जाने

2. लोक वाद्य किस प्रकार का वाद्य हैं? (तंत, तार, ताल, नाद, सुषिर अथवा मिश्र या अन्य) नाद

3. देश और राज्य में किस क्षेत्र से यह लोकवाद्य जुड़ा है? संभाग, जिला आदि ... महाराष्ट्र

4. इस वाद्य को कौन बजाता है? और कब–कब (कोई जाति–ज्ञाति का नाम, स्त्री या पुरूष) (त्योहार, शादी, मेला, सामाजिक प्रसंग, जन्म एवं मृत्यु आदि में) : इसके ताल, चाले, या राग बताएं। कोई बोल या लोकगाथा–लोकगीत में बजता हो तो वह भी लिखे।

   सर्वच वाजपू राकतान, मजनान वाजने

   जमाच्पोवढी नाजनेपण मृत्युच्या वेळी वाजन नाही प्रबोधन आरी धार्मिक विषयाला द्येरून वाजवतात

   1) पांडूरंगा, पाडंरंगा भी पतंग तुस्या हामी धाका

   2) पंढरपूरामध्ये, भरला बाजार लोक ही जमते तासोहजार

5. लोक वाद्य की उत्पत्ति के संदर्भ मैं एतिहासिक प्रमाण, मिथक या प्रचलित मान्यता के बारे मैं बताइए? (सभी का विवरण प्रादेशिक नाम एवं हिन्दी अर्थ के साथ लिखना है।)

   पूरातन आहे, हंगर वाद आई लाकजच्या कपरामध्ये वापरून

6. इस वाद्य को कैसे बनाते है? बनाने की समग्र क्रिया, उपयोग में ली सामग्री, साधन के नाम आदि। (कोई पूजा/कर्मकांड, कथा और प्रसंग हो तो लिखे)

   सगवान ताकूड दिुक, शिसम लाकूड

   कोरून कोरून बनविणे।

   धोरपडीये कातढ घोण

   एक अणि चूना लेप करून

   कामल्याला एक रज भिजू घालम (पाधाम)

   दुरूत्याडिवशी काढण

लाकडावर लेप ताबून तयानंनर कानष्ठ तापून त्याल डांग मध्येदारी बांशूण उन्हान एक दिवसि किवा 2 दिवस ठेवलान बावपू झाल्याण दोरी सोडण जोवठ कानष्ठ पाहिजे जेवठ ठेवण आणि बाकी काढून टाकणे वाजवासला सुरूकरणे।

7. इस वाद्य के साथ अन्य कौन से वाद्य बजाये जाते है? नाम लिखे।

चिपुडया, सांजा, सुष्सुठा, कणकणी वाजनान

8. इस वाद्य के विभिन्न भागों के नाम बताइए? (आदिवासी/पारंपरिक भाषा में और हिन्दी अर्थ) : (सूचना–लोकवाद्य का चित्र पेन/पेंसिल से बना साकते हैं, या फोटो लेना है)

चिपळया लावल्या जातान

9. इस लोक वाद्य यंत्र से कलाकारों के व्यावसायिक जीवन या सामाजिक जीवन से संबंध क्या है? क्या उपयोगिता है? (समुदाय में प्रचलित मिथक/दंतकथा का उल्लेख करें)

व्यावसायिक संबंध नहीं – आत्मज संतुष्टी

क्बीराले दोहे, संस्कार, संस्कृति प्रसुनी, प्रकृति माना

10. इस लोक वाद्य यंत्र का भविष्य क्या हैं?

भविष्यान राहीत, लोक वाठनीतं वाजविणारे

10. नई पीढ़ी आपके लोक वाद्य यंत्र को सिख रही है? हा, तो कैसे? ना तो कया कारण है?

नवीन सिठी शिलेय

पुखादया गावान रूदलोक मिष्ठान

12. इस कार्यशाला से लोक वाद्य यंत्र को संरक्षण और प्रसार कैसे मिलेगा? आपके सुझाव

संरक्षण प्रसार मिलनो

13. लोक वाद्य को पाठ्यक्रम/शिक्षा मैं कैसे जोड़ सकते हैं? आपके विचार कहिए।

रूगीन विदयालय, लोकगीतों में लोकतत्व वन्ड – वर्षालीन मुलांत

14. इस वाद्य के वादन के लिए आप को कोई पुरस्कार (राज्य और राष्ट्रीय स्तर का) और सम्मान मिला है?

नही।

15. लोकवाद्य कलाकार का परिचयः

नाम : आसाराम रूपचंद विठोरे ग्राम–गोंदी पोस्ट–गोंदी, त.–आंबड, जिला–जालना, राज्य–महाराष्ट्र राज्य, कॉन्टेक्ट नम्बर–9604527972

(नोट: यह प्रश्नावली सभी कलाकारों से भरवाई गई।)

संदर्भ पुस्तके, संस्थाएं

1. भारतीय संस्कृति, संपादक सोने गुरूजी, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन 2001
2. संगीत सौरभ- संपादक, ब्रह्मावर्चस, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, 2019
3. सम्पदा (मध्यप्रदेश की जनजातीय सांस्कृतिक परम्परा का साक्ष्य/संपादक- वंदना पाण्डेय, अशोक मिश्र), आदिवासी कला परिषद् एवं बोली विकास आकादमी प्रकाशन- 2018 चतुर्थ संस्करण
4. गुजरात - लोक संस्कृति और साहित्य | संपादक- हसू याज्ञिक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत-2005
5. महाउर (कला संस्कृति, साहित्य और परम्परा का अनूठा अनुष्ठान) | संपादक - डॉ. शिव शंकर मिश्र 'सरस' आयाम प्रकाशन 21, एसबीआई कालोनी, एमपीनगर, भोपाल -2017
6. लोक रंग (गुजरात के साहित्य गीत) संपादक- डॉ. सुरेश मखवाना, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल, वर्ष - 2019
7. राग परिचय भाग-1, संपादक-हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, संगीत सदन प्रकाशन, साऊथ मलाका, इलाहाबाद, वर्ष 1999
8. चौमासा वर्ष 37 विशेषांक 116 जुलाई अक्टूबर | संपादक-डॉ. धर्मेन्द्र पोर, जनजातीय लोककला एवं बोली विकास अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल, प्रकाशन वर्ष - 2021

9. काष्ठ शिल्प ,मध्यप्रदेश की जनजातीय काष्ठ शिल्प परम्परा| संपादक-कपिल तिवारी, नवल शुक्ल, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल का प्रकाशन-1996
10. चौमासा वर्ष 33 अंक, 03 मार्च-जून 2017 | संपादक-अशोक मिश्र, आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी-2017
11. आदिवासी दुनिया | संपादक- हरिराम मीणा, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत प्रकाशन - 2013

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल